मोहनदास नैमिशराय के मुक्तिपर्व उपन्यास में दलित विमर्श

प्रा. अशोक गोविंदराव उघडे
हिंदी विभाग
आदर्श महाविद्यालय, विटा,
तहसिल-खानापूर,
जिला सांगली (महाराष्ट्र)

आजकाल दलित शब्द को लेकर साहित्य के क्षेत्र में बहुत चर्चा हो रही है। वैसे देखा जाए तो दलित शब्द की उत्पति 'दल्' धातु से हुई जिसका अर्थ है पिछड़ा, शोषित, रौंदा हुआ, अविकसित, अछुत आदि बहुत अर्थ है। अर्थात जो दबाया गया हो अथवा जिसे पनपने या बढने न दिया गया हो वही दलित है।

इन दलित समाज को सवर्ण लोगों ने या परंपरा एवं बुरी व्यवस्था से बरसों तक उपेक्षित या अपमानित किया है। दलित की परिभाषा अगर हम संक्षेप में करे तो जैसे, जिसका जीवन कीड़े-मकौड़े जैसे घृणित है ऐसे मानव को दलित कहतें है।

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने संविधान में ज्यो दलित या आम आदमी के लिए जो अधिकार दिए उस अधिकार से वर्तमान काल में दलित समाज पढ़ रहा है। पढ़कर आगे बढ़ रहा है।

इसी वजह बहुत से दलित साहित्यकार अपनी वेदना, विचार लिख रहे हैं। इनका मकसद है कि बहुत सारे समस्याओं पर लिखने से दलित समाज में नई चेतना आएगी और उसमें परिवर्तन होगा। इसमें प्रमुख साहित्यकारों में मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मिकी, जयप्रकाश कर्दम, सत्यप्रकाश श्यौराज सिंह बैचेन, कवलभारती, उमराव सिंह, जाटव, रमणिका गुप्ता, सुशिला टाकभौरे, विमल थोरात, ज्योती लांजेवार ऐसे बहुत कुछ हिंदी साहित्यकार है ज्यो समाज में परिवर्तन ला रहै हैं।

मोहनदास नैमिशराय का मुक्तिपर्व उपन्यास २००२ में पाठक के सामने आया ज्यो दलित जीवन से व्यक्त होता है।

प्राचीन काल से दलित, वंचित, शोषित समाज को शिक्षा से दूर रखा था। मनुवादी व्यवस्थापक एवं समर्थक लोगों को डर था कि दलितों को शिक्षा मिलेगी तो वे गुलामी नहीं करेंगे हमे सवाल पुछेंगे इसीलिए इन्हे शिक्षा के लिए इजाजत नहीं दी गई।

मनुवादी लोग, अपना हित विशेष अधिकार सत्ता प्राप्त करने लिए यह व्यवस्था जानबुझकर दलितों को शिक्षा से दूर रख रहे हैं। शिक्षा व्यवस्था एक आदर्श व्यवस्था मानी जाती है। लेकिन आज भी पुराने लोग या परम्परागत शिक्षकों के मन से जाति के संस्कार आज भी विद्यमान है। इसीकारण यह समानता नहीं ला सकते । इसी संदर्भ में रजनी तिलक का मंतव्य महत्वपूर्ण है। "भारतीय शिक्षा व्यवस्था के जनक शिक्षको के मनपटल से ही जाति का संस्कार नहीं निकल सका तो वह छात्रों को कैसी समानता की शिक्षा दे सकेंगे।" आधुनिक काल में अंग्रेजों के कारण शिक्षा के द्वार सबके लिए खुल गए। सही मायने में दलितों को शिक्षित बनने का संदेश डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर जी ने दिया हैं।

दलित समाज शिक्षित बनकर अपने अस्तित्व के बारें में सोचने लगे । उनमें काफी बदलाव हो गया। शिक्षा से वह स्वाभिमानी और स्वावलंबी हो गए। उसी धरातल पर नैमिशरायजी ने 'मुक्तीपर्व' उपन्यास लिखा जिसका प्रमुख नायक सुनीत है। सुनीत के पिता का नाम बंसी है। यह पात्र भी परम्परागत रूढी-परम्पराओं का विरोध करता है। इस उपन्यास में सुनीत का जन्म ही आजादी में हुआ है इसीलिए दलित भी आजाद हो गए यानी हमें इस गुलामी से मुक्ती मिल गई। इसी उद्देश से नैमिशराय ने मुक्तिपर्व यह उपन्यास लिखा है।

प्राचीन काल से दलित या गरीब लोगों को गुलाम की पिंजरों में बंदिस्त करके सताया गया है। जिस प्रकार बडी मछली छोटी मछली को खा जाती है इसीलिए निम्नवर्ग के हिस्से में हमेशा गुलामी भायी है।

प्रस्तुत उपन्यास में मोहनदास नैमिशराय ने गुलामों के प्रति विद्रोह प्रकट किया है। देश आजाद होने पर सभी स्वतंत्र थे। जमींदार या ठाकूर को हवेली पर या खेतों में बारह घंटे मेहनत करने के लिए गुलाम चाहिए था। दलित गुलाम नहीं थे पर गुलामों की तरह उन्हें रखा जाता था। वैसे ही नवाब साहब की हवेली पर बंसी काम करता था। बंसी यह उपन्यास में विद्रोही पात्र है। बंसी को नवाबसाहब का अमानुष अत्याचार डाट, फटकार, गाली-गलौच का शिकार होना पडता था। एक दिन नवाबसाहब क्रोधित थे उसका कारण बंसी थोडा लेट आया थ और वह गुस्से का शिकार हो जाता है।

नवाब को उल्टी आई थी इसीलिए उसने बंसी को उगालदान मँगाया। बंसी ने बहुत ढूँढने पर भी वह मिला नही। हथेली सामने करने के लिए कहता है। हथेली ही अपना उगालदान समझकर ढेर सारी खकार बंसी की हथेली पर थुक देता है। नवाब साहब के लिए वही उगालदान और पीकदान था। बंसी उसी दिन बहुत रोता है।

बरसों से न जाने कितने दलित नवाब जमींदार और सवर्णों के शोषण का शिकार हो रहे थे। उनके खिलाफ वे आवाज नहीं उठा सकते थे। यदी आवाज उठाते तो उनके साथ जानवरों से बदतर सलूक किया जाता था। नवाब को आजादी की बाते सूनकर वे बंसी को गुलामी की याद दिलाते हुए कहते है कि ''तुम गुलाम थे, गुलाम हो, गुलाम रहोगे।'' यह बात सूनकर बंसी विद्रोह करता हुआ कहता है। ''जनाबे अली, हम न गुलाम थे, न गुलाम है, न गुलाम रहेंगे।'' बंसी ने नवाब साहब का काम उसी दिन छोडा था जिस दिन उसके हथेली पर उगालदान समझकर थूँका था।

आजादी के बाद बंसी के व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है। बंसी अपने बेटे का नामकरण खूद करता है। पंडीजी नामकरण करने के लिए आते है तो बंसी उन्हे वापस लौटाता है और आज से हमारी बस्ती में न आने के लिए कहता है। पंडीत लोग दलित के घर का पानी भी नहीं पिते थे, लेकिन उन्ही के दिए हुए धन से अपना जीवनयापन करते थे।

इस उपन्यास में अध्यापक पाण्डे जाति से ब्राम्हण है। वह दलित छात्र, सुनीत को हमेशा अपमानित करता है। जाति के नाम से लेकर जलील करता है। उसे सुनीत का अध्ययन करना अच्छा नहीं लगता । सुनीत स्वाभिमानी और स्वावलंबी है। इतना ही नहीं तो वह महामानव डॉ. आंबेडकर के विचारों से प्रभावित है। सुनीत अध्यापक पांडे को जवाब अपने तरीके से देना चाहता है। इसीलिए सुनीत दिन-रात अध्ययन करता है। घर में घासलेट के दियाँ पर या बाहर गली के किनारे पर लगे लैम्प के उजाले में पढ़ता है। मेहनत का फल सुनीत को मिल जाता है और वह प्रथम श्रेणी में पास हो जाता है। सुनीत मेरिट के आधार पर स्कॉलरशिप का फॉर्म भरना चाहता है। लेकिन अध्यापक पाण्डे उसे मेरिट के आधारपर फॉर्म भरने के लिए मना करते है और कहते है, ''तुम शेड्युल्ड कास्ट हो फिर जाति का फार्म कहाँ है?'' सुनीत दुःखी होकर लौट जाता है। अगले दिन फार्मपर हस्ताक्षर करने की बिनती करता है। तभी उसकी सहायता सुनीत की दोस्त सुमित्रा करती है। उसे हेडमास्टर के पास लेकर अध्यापक पाण्डे की शिकायत करती है। सुमित्रा सवर्ण समाज से होने के बावजूद भी सुनीत का साथ देती है।

आजादी के बाद दलित बस्ती में अच्छा परिवर्तन हो रहा था। अपने अस्मिता और स्वाभिमान का बोध होने लगा था। बंसी के बाद सभी लोगों को बोध हो रहा था और वे सभी लोग धीरे धीरे अपना काम छोड रहे थे। औरतें भी जमींदार तथा काश्तकारों के घरों तथा खेतों से मजुरी छोड रही थी। उन सभी के भीतर चेतना का सुरज उग रहा था। वे अबला नहीं सबला बन रहीं थी। सुनीत ने सभी दलित बस्ती के लडकों को पढाना शुरू किया। इतना ही नहीं करतारा भंगी का बेटा और बेटी को भी स्कुल में दाखिला डाल दिया।

सुनीत को उसकी सहपाठी सुमित्रा की हर जगह पर सहायता थी। दोनों भी पढ-लिखकर अध्यापक बन जातें हैं और बस्ती के गरीब लोगों के दलित, वंचित शोषित पीडित बेटों को पढाना शुरू करते हैं।

मनुष्य की जन्मजात प्रवृत्ती है कि सबल दुर्बल को दबाना है और उसका शोषण करता है। इस व्यवस्था ने देश की जातियों में बाँटकर मावता को बाँटने की सफल कोशिश की गई है। इसीलिए डॉ. आंबेडकर कहते है। ''जो धर्म एक को ज्ञानी बनाकर दूसरों को अज्ञानी रखे वह धर्म नहीं बल्कि लोंगो को बौद्धिक गुलाम रखनेवाला मंदिर रूपी जेलखाना है जो धर्म के हाथ में शस्त्र देता है और दूसरों को निशस्त्र रहने का आदेश देता है वह धर्म न होकर परतंत्र की बेडी है। जो धर्म कुछ लोगों को धनोपार्जन करने की छूट देता है वह धर्म न होकर कुछ स्वार्थियों का धर्म है।''

मनुवादी व्यवस्था ने धार्मिक मान्यताओं को ईश्वरी रूप देकर दलितों को गुलाम बनाया है। जबतक धार्मिक मान्यताएँ नहीं बदलती तब तक वह व्यवहार नहीं बदल सकता है। विश्वभर में कोई ऐसा देश एवं धर्म नहीं है ज्यो मनुष्य को इतने बडे समुह को अपने अधिकार तथा पुजा स्थलों में प्रवेश से वंचित कर दे।

प्रस्तुत उपन्यास में शिवानंद शर्मा ऐसा पात्र है ज्यो एक अध्यापक है लेकिन उसने पाठशाला में ही शिवमंदिर बनवाया है। वह अध्यापक कम और धार्मिक पुजारी ही ज्यादा है। मंदिर से मिली दान-दक्षिणा पंडीत शिवानंद शर्मा स्वयं लेते है। उन्होंने वहाँपर बैठकखाना भी बना लिया था। वहीपर ट्युशन भी पढाते है। मंदिर से इन्हे लाभ ही लाभ था। वहाँ पर ही धर्मग्रंथ पढे जाते थे। इस पाठशाला में सुनीत का मित्र हबीबुल्ला है। एकदिन दोनों अध्यापक शिवानंद शर्मा का मंदिर देखने जाते है। तभी मंदिर में अचानक शिवानंद शर्मा आ जाते हैं। दोनों को मंदिर में देखकर क्रोधीत होकर बोलते हैं - ''एक माँस काटनेवाला और दूसरा माँस खिंचनेवाला। हे भगवान सत्यानाश हो तुम्हारा। हमारा तो मंदिर ही भ्रष्ट करा दिया।''

यह सुनकर दोनों के भी दिल को गहरी चोट पहुँचती है। सुनीत मन ही मन कहता है, शर्माजी पढाते समय कहते है कि बच्चे तो भगवान का रूप होते हैं, वह कौनसा भगवान है? इससे स्पष्ट होता है कि सवर्ण अध्यापक के मन से जाति आजतक नहीं गई है। उनके कथनी करनी में अंतर दिखाई देता है।

सुनीत ने जातियता कितनी गहराई में होती उसका और एक प्रसंग बताता है। बस्ती में एक प्याऊ था । पंडित दलितों को रबर की नलकी से पानी पिलाता था। इसीलिए सुनीत नाराज था। वह अध्यापक से कहता है ‘‘आप तो रोज हमें पढाते है, हम सब एक है। हमारे देश में न कोई उँचा है न कोई नीचा। सुनीत पंडीतजी से विरोध करने के लिए मास्टरजी की सहायता करता है। सभी लडकों को इकठ्ठा करके प्याऊ पर जाता है। पंडीतजी की हाथ की नलकी फेंक देता है और सभी एक ही बर्तन से पानी पिलाने के लिए मजबूर कर देता है। शिक्षा लेने से कम उम्र में ही वह समझदार बन गया था। इसीलिए वह समाज की रूढी परम्परा को मिटाने का प्रयास करता है।

निष्कर्ष रूप से मोहनदास नैमिशराय के मुक्तिपर्व उपन्यास से स्पष्ट होता है कि दलित डॉ. आंबेडकर की प्रेरणा लेकर नया वैचारिक प्रवाह को प्रसारित कर रहे है। ‘मुक्तिपर्व’ उपन्यास दलित समाज जीवन का दस्तावेज है। दलित समाज शिक्षित होकर अपने अधिकार के लिए संघर्ष कर रहे है। वे धर्मग्रंथ का विरोध कर रहें है। आजादी मिलने के बाद दलित समाज, जातियता, अन्याय, अत्याचार रूढी-परम्परा, अमानवीयता का खूलकर विरोध कर रहे हैं। परम्परागत गुलामी करना छोड दिया है। यह सच है कि मोहनदास नैमिशराय ने मुक्तिपर्व यह उपन्यास लिखकर दलितों को प्रगती का रास्ता दिखाने का प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः-

१. मुक्तिपर्व (उपन्यास) - मोहनदास नैमिशराय
२. मोहनदास नैमिशराय के उपन्यास में विद्रोह -विधाते विकास कुंडलिक
३. इक्कीसवीं सदी का कथा साहित्य - डॉ. सुरैया शेख
४. हिंदी उपन्यास और विमर्श अद्यतन दृष्टी - डॉ. जयश्री शिंदे